इन्दु जोशी

विश्वास रच रहा है मुझे

इन्दु जोशी

जन्म : २ अक्टूबर १९६०
कलकत्ता (प० बंगाल)

शिक्षा : एम० ए० (हिन्दी)
'छायावादोत्तर काव्य में
परम्परा और प्रयोग'
नामक शोधग्रन्थ पर
पी० एच० डी० ।

सुप्रसिद्ध कवि शंकर माहेश्वरी द्वारा
सम्पादित **नवांकुर** में कुछ कविताएँ
संकलित (१९८६)

सम्पादन : सुप्रसिद्ध त्रैमासिक
नारीमंच अपूर्वा की
सम्पादक (१९८८—)

सह-सम्पादन : घर-गृहस्थी में कविता (१९८६)

प्रस्तुत काव्य संकलन प्रथम प्रकाशित पुस्तक

सम्पर्क : ३१, सर हरिराम गोयनका
स्ट्रीट, कलकत्ता ७००००७

विश्वास रच रहा है मुझे/इन्दु जोशी

प्रतिध्वनि

कलकत्ता

७००००७

© डॉ० इन्दु जोशी
विश्वास रच रहा है मुझे / डॉ० इन्दु जोशी की कविताएँ
प्रतिध्वनि के लिए मधु जोशी, ३१, सर हरीराम गोयनका स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००७
द्वारा प्रकाशित / शिव कुमार नोपानी, एसकेज़, ८, शोभाराम बैसाक स्ट्रीट,
कलकत्ता-७००००७ द्वारा मुद्रित
आवरण : विभूतिभूषण दासगुप्त
प्रथम संस्करण—१९९२
मूल्य : तीस रुपये
VISHWAS RACH RAHA HAI MUJHE
POEMS BY **Dr. INDU JOSHI**

माँ-बाबूजी को
जिनके स्वप्न और संस्कार ने
मुझे रचने का विश्वास दिया
—इन्दु जोशी

अनुक्रम

अस्तित्व	९
आत्मस्वीकृति	१०
मैं एक औरत	११
ठीकरा	१२
शब्द	१३
सम्बन्ध	१४
कविता मैंने जानना चाहा तुमको	१५
पृथ्वी	१६
रूपकुँवर	१७
नारी मुक्ति	२०
ग़ुलामी	२२
अस्वीकार	२३
धर्मक्षेत्र	२४
हम छोड़ दिए गए हैं	२५
मैं जिस ज़मीन पर खड़ी हूँ	२६
स्पर्धा	२७

काँच	२८
प्रतीक्षा	२९
नियति	३०
अर्थ	३१
प्रेम	३२
मौसम	३३
उत्तर की तलाश	३४
अविश्वास	३५
झींगुर की तरह बज रहे हैं शब्द	३६
खालीपन	३८
क्यों कह देते हो	३९
अकल्पित	४०
खामोशी	४१
अनकही बात	४२
तुम बार-बार आते हो	४३
स्वभाव	४४
चुनौती	४५
यात्रा	४६
हम दोनों	४७
जब तुम नहीं होते	४८
दाँव पर प्रतिष्ठा	४९
स्पर्श	५०
चाँदनी और धूप	५१
तुमने क्यों कहा था	५२
अर्द्धनारीश्वर	५४
तुम बनो	५५
विश्वास तो स्वयं रचना है	५६

★

विश्वास

रच

रहा है

मुझे

अस्तित्व

□

मैंने तो सिर्फ़ अपने होने का ऐलान किया
और लोगों की नींद उड़नछू हो गई

उनका शरीर ढीला पड़ रहा है
हाथ मलते हुए वे दौड़ लगा रहे हैं
एक कोने से दूसरे कोने तक
दूसरे से तीसरे—तीसरे से चौथे
चौथे से जहाँ-तहाँ
मानो उन्हें खण्ड प्रलय का संकेत मिल गया हो
या फिर आकाश
टूट पड़ने वाला हो

जब भी कोई
अपने वजूद के साथ खड़ा होता है
नासमझ और कमज़ोर लोग
सूखे पत्तों की तरह झरने लगते हैं

मैं तो अपनी जगह हूँ
और लोग हैं कि अपनी अपनी जगह
छोड़ते जा रहे हैं।●

आत्म-स्वीकृति

□

रोशनी—मेरी दृष्टि
शक्ति संचरित करती आग
एक कशिश
भीतरी यथार्थ को
पर्यवसित करने में
मर्यादित रेखाओं से डरती
फिर भी अपने भीतर
आग की तपिश को
महसूस करती। ●

मैं एक औरत

□

मैं एक औरत
आदिम युग से
सृष्टि की संवाहक
सहती सृजन की पीड़ा

मैं एक औरत
आदम की हव्वा
कलाई का धागा
रचना की प्रेरणा

मैं एक औरत
एक कम्पाउण्ड
एक आग
एक बिस्तर

मैं एक औरत
आकाशरहित
इच्छामती नदी की तरह
निरन्तर
प्रवाहित। ●

ठीकरा

□

मिट्टी का ठीकरा
सार्थक है एक पहचान के साथ
रूप, रंग, गन्ध से परे

मिट्टी के ठीकरे से
बनाया जा सकता है निशाना
किया जा सकता है अन्याय का प्रतिवाद ।●

शब्द

□

जब रक्तसने हृद्पिंड से
उठते हैं शब्द
जब धमनियों में
दौड़ लगाते हैं शब्द
जब आँखों से निकल
आकाश में छा जाते हैं शब्द
जब प्रथम चुम्बन
की तरह होते हैं शब्द
तब शब्द
प्रार्थना की तरह बजते हैं
प्रसाद बन जाते हैं। ●

सम्बन्ध

□.

सम्बन्ध क्षितिज की तरह
नहीं होते
न होते हैं सौदे के भाव की तरह
वे रेल की पटरियों की
तरह भी नहीं होते
और न होते हैं
धरती और आकाश की तरह

सम्बन्ध
फूलों में बसी गन्ध की तरह होते हैं
जो उन्मुक्तता में खिलते हैं
निर्मलता के जल से सिंचते हैं
फूलते और फलते हैं। ●

कविता मैंने जानना चाहा तुमको

□

रोज़
सुबह उठकर
बुहारती हूँ घर-आँगन
काँचती हूँ कपड़े
भरती हूँ पानी
और शाम हो जाती है

फिर पोंछती हूँ घर-आँगन
तहाती हूँ कपड़े
फिर भरती हूँ पानी
रात हो जाती है

अपना-अपना पासा फेंकते हैं दिन-रात
उनकी गिरफ़्त में बँधकर
घूमता है जीवन एक ही धुरी पर

कविता !
मैंने जानना चाहा तुमको
और मुझे लगा
कि तुम
मेरे घर-आँगन की धूल
कपड़ों की मैल
और बार-बार पानी भरने में समा गई हो। ●

पृथ्वी

□

ज्यों का त्यों है आकाश अब भी
नहीं आईं
अपनी सीमा के बाहर
समुद्र की लहरें
ठीक-ठीक रुका सूर्य
अपनी यात्रा के विरामचिन्ह पर
चाँद वैसे ही कभी घटा, कभी बढ़ा
ऋतुएँ क्रम से आईं और गईं
मैं होती रही प्रभावित इन सभी से

किन्तु क्या इन सबसे परे
कुछ भी नहीं हूँ मैं ? ●

रूपकुँवर

□

रूपकुँवर !
माना कि मालसिंह के साथ तुमने लिए थे सात फेरे
वह था तुम्हारी ज़िन्दगी का आधार
किन्तु रक्षाकवच की तरह उसे पहन कर चलना
तुम्हारी अपनी रूप-रेखा तो नहीं हो सकती थी ?

हमारे ही शत्रु बन जाते हैं
हमारी मान्यताओं के जड़-मूल्य

जिन्हें जड़ दिया गया था
तुम्हारे अविकसित मन में
कि वे हैं तो तुम हो
वे नहीं तो तुम भी नहीं

रूप !
जानना चाहती हूँ मैं
क्या तुम्हारी दुनिया सिर्फ़ मालसिंह तक थी
उसके बिना नहीं थी तुम्हारी कोई सार्थकता ?
यदि कीर्ति ही थी तुम्हारी अभीप्सा
तो तुम चुन सकती थी सावित्री का रास्ता
पर तुमने
दर्द को दबाकर
खून के घूँट पी
राख का टीका लगाया अपने माथे पर

तुम कुछ और भी बन सकती थी, रूपकुँवर !
मरुभूमि का वह तीर्थस्थल
जहाँ हाथों के उठने भर से
छलछलाता जल दौड़ पड़ता है रेगिस्तान में
लेकिन तुमने
भयभीत हिरनी की तरह
मूँद ली अपनी आँखें
और बना दिया उन्हें हक़दार
अपनी ज़िदगी और मौत का,
जिनके लिए तुम कुछ भी नहीं थी
पराई औलाद के सिवा !

तुमसे अच्छी तो वह कठपुतली है
जिसके करतब दिखलाकर
मालिक रख लेता है उसे सम्हाल कर
तुम तो वह भी नहीं हुई

औरों की छाँह में छिपकर जीना
मुँह ढक कर चलना
यदि यही है नारी धर्म
तो गर्द ही गर्द नारी के जीवन पर उड़ती रहेगी
नहीं फूट पाएगा
ऊर्जा का स्रोत कभी

रूपकुँवर !
काश ! तुमने तोड़ दिया होता ऊँची दीवारों को
फ़ौलादी हाथों से
हाँ, सिर्फ़ एक बार
तुम्हारे हुंकार भरने की देर थी
कि ठेकेदार इस झूठे और पाखंडी समाज के
रगड़ने लगते अपनी ऊँची नाक
तुम्हारे क़दमों पर
दुनिया का रुख पलट जाता है
जब नारी बन जाती है महिषासुरमर्दिनी
देवता भी तब उसकी ही शरण में आते हैं

तुम तो कुछ भी नहीं बन पाई, रूपकुँवर !
सिवाय पोखर के पानी की हलचल के
जिससे रची गईं अखबारों में सुर्खियाँ
या फिर कुत्तों और बिल्लियों के लिए
बन्दोबस्त हुआ कुछ हड्डियों और दूध का

रूपकुँवर !
नारी के रूप में जन्म लेना पुण्य है
वही जनम देती है महावीर पुरुषों को
नारी का धर्म
वही नारी समझती है
जो जोन ऑफ़ आर्क
या झाँसी की रानी बन सकती है।

नारी मुक्ति !

□

एक लड़की लटक रही है
मेरे कमरे के सीलिंग फैन से
जिसकी आँखें बाहर निकल आई हैं
मानो कह रही हो मुझे
मेरी तरह झूल जाओ रस्सी से
इसी में छिपी है तुम्हारी भी मुक्ति

मैं तलाश रही हूँ नारी मुक्ति की बात
और अखबारों में छपी
पालघाट या कानपुर की बहनों की लम्बी हुई
गर्दनों की रस्सी
मेरी गर्दन पर भी कसने लगती है

नारी मुक्ति !
यानी रस्सी पर लटकने का सवाल !
जिस रस्सी पर चलकर
कभी नारी करतब दिखाया करती थी
पुरुष के मन, मिज़ाज, संस्कार को
बहलाया करती थी
आज वही रस्सी
उसकी गर्दन पर कसने लगी है
और नारी खुद से सवाल करने लगी है

अच्छा ही है
कि कुछ औरतें अपने भ्रूण का परीक्षण करवाती हैं
और वहाँ 'फीमेल' को पा, उससे छुटकारा पाती हैं
ना नारी जन्म लेगी
ना उसे रस्सी पर झूलना पड़ेगा

मेरे सीलिंग फैन से
एक लड़की
हर रोज़ लटक जाती है
उसकी आँखें और ज़बान
रहते हैं बाहर निकले
मानो कहती हो मुझसे
कि अपने पिता या भाई से कहो
कि मेरे चेहरे में देखें
तुम्हारा भी चेहरा
या
बोलना शुरू करो तुम मेरी ज़बान में
कि ज़रूरत है इन हाथों में एक तलवार की
रक्तबीजों के संहार की
अन्यथा
रस्सी से झूल जाओ
नारी मुक्ति की बात हमेशा के लिए भूल जाओ ।●

ग़ुलामी

□

गुलामी करनी पड़ती है औरत को
क्या सिर्फ़ दो रोटी के लिए ?

पेट की भूखी अतड़ियाँ
जब हमला करेंगी कल मुझपर
तब यही सवाल मेरे सामने भी खड़ा होगा

भूख
यानी पेट भरने का सवाल
अपना हो या दूसरे का
क्या इसीलिए फूँक दी जाए पूरी एक ज़िन्दगी
या ख़ुद बन जाए औरत एक रोटी ?

काश ! औरत समझ पाए
कितनी उम्र गँवा दी उसने
अँगीठी को गर्म और ठण्डा करने में

जिस दिन
जागेगा उसमें विश्वास
वह ख़ुद को माफ़ नहीं कर पाएगी
कि ख़ुद रोटी बनने या बनाने के अलावा
उसने कुछ नहीं जाना। ●

अस्वीकार

□

मेरे शहर के लोगो !
तुम्हारी हरकतों से
अब मुझे डर नहीं लगता
जान गई हूँ मैं
तुम सबके सब
आत्म-विच्युति के शिकार हो

गिरगिट की तरह रंग बदलना
खीसें निपोरना
हवा में चाक़ू चलाना
या अपने अधूरेपन का नगाड़ा पीटना
यही है ना तुमलोगों का स्वभाव !

मेरे शहर के लोगो !
देखो, मैं खड़ी हूँ
थोथी मान्यताओं के खिलाफ़
कर रही हूँ इन्कार
तुम लोगों की दी गई नियति को

कोल्हू के बैल की तरह एक लीक घूमना
सुविधाएँ जुटाना
अपने को नर्म बिस्तर तक पहुँचाना
क्या खूब है तुम लोगों का लक्ष्य !

लेकिन मेरे शहर के अधमरे लोगो !
तुम लोगों जैसी मैं नहीं हूँ। ●

धर्मक्षेत्र

□

मेरी टेबल पर रखा है काग़ज़ का एक टुकड़ा
जिसे पढ़कर
साकार हो उठती है कुरुक्षेत्र की धरती ।

उभरने लगते हैं ख़ुदग़र्ज पीढ़ी के चेहरे
मेरे दिमाग़ की तनी नसों पर
जो नक़ाब लगाकर संस्कृति के संवाहक तो बनते हैं
किन्तु भोले लोगों को
बनाते हैं चबेना
अपनी हवस का

पर मैंने बीड़ा उठाया है
अक्षरों से रोशनी पैदा करने का
शपथ ली है तहखानों में बंद आत्माओं को
धूप का टुकड़ा पहुँचाने की
और अपने जिस्म से
एक चमक उगाने की

इसलिए डर नहीं है मुझे
यदि कोई अपना सगा विपक्ष की भूमिका निभाता है
और काग़ज़ के टुकड़े पर अपना असली चेहरा दिखाता है
कुरुक्षेत्र तो तभी शुरू हो जाता है
जब कोई कर्म को अपना धर्मक्षेत्र बनाता है ।●

हम छोड़ दिए गए हैं

□

हम छोड़ दिए गए हैं
एक ख़ूँखार माहौल में
जहाँ अस्त्रों की जगह
हमारे हाथों में हैं लाचार प्रार्थनाएँ

हम छोड़ दिए गए हैं
एक ख़ूँखार माहौल में
जहाँ खोखले लोग एकजुट होकर
कर रहे हैं वीरता का नाटक

हम छोड़ दिए गए हैं
इस ख़ूँखार माहौल में
ताकि अगर हम बच जाएँ
तो इसकी भयानकता की साक्षी दे सकें

हमारा होना
क्या सिर्फ़ इसीलिए है ?
क्या इसीलिए ? ●

मैं जिस ज़मीन पर खड़ी हूँ

□

मैं जिस ज़मीन पर खड़ी हूँ
उसी ज़मीन पर खड़े हैं कुछ लोग
जो इसे पराई समझ रहे हैं

अपनी ज़मीन
जब पराई लगने लगती है
तब नफ़रत में बदल जाता है प्यार
और हिंसा की आग लगाती है नफ़रत

मैं जिस ज़मीन पर ख़ड़ी हूँ
उसी ज़मीन पर खड़े हैं कुछ लोग
जो निर्दोषों की हत्या कर
अपनी बुज़दिली का झंडा फहरा रहे हैं

लेकिन लगता है
कोई भी ज़मीन नहीं है उनके पाँवों के नीचे
नहीं है उनके सिरों पर कोई आकाश
वे बदहवासी में
नकार रहे हैं अपने पूरे वजूद को

जब आदमी नफ़रत करने लगता है अपने आप से
तब वह उठाता है हथियार
और उसके लिए हो जाता है सब कुछ बेकार
उसका धर्म, उसका देश, उसकी धरती, उसका प्यार

स्पर्धा

□

अलग अलग राग छेड़ रहे हैं लोग
फूट रही हैं कर्कश आवाज़ें
मानो ललकार रही हों
एक दूजे को

खुद को
सच्चा साबित करने की स्पर्धा में
फेंक रहे हैं एक दूसरे पर
नफ़रत और हिकारत के बैलून

ऐसा क्यों होता है
कि विश्वास अपनों से छला जाता है
खंडित हो जाता है उत्साह
और क्रान्ति की बात
सिर्फ़ कौवों की काँव - काँव रह जाती है

लेकिन मैं लिखूँगी
इस काँव - काँव से परे
रचूँगी कुछ नया
तब पड़ने लग जाएँगे वे सभी छोटे
जो अपने बौनेपन से
दूसरों को छोटा करना चाहते हैं।●

काँच

□

कब काँच दरका अल्मारी का
बँट गया लकीरों में
मुझे पता नहीं

भूचाल आता
अथवा बम फटता
तो भी समझ में आता

फिर अचानक कैसे हो गया
सतर्कता के बावजूद
कीलों में फिट काँच कैसे दरक गया ?

अब खंडित नज़र आती है
अल्मारी के अन्दर रखी हर वस्तु
मैं भी दिखती होऊँगी वैसी
वस्तु को भी ?

ढाँपती हूँ लकीरों को सेलोटेप से
किन्तु लकीरें अपने होने का पता देती हैं
सेलो टेप के अन्दर से भी

सोचती हूँ
नए फ्रेम को लगा देना चाहिए इसे उतार कर। ●

प्रतीक्षा

□

प्रतीक्षा है मुझे
उन बीजों के अंकुरित होने की
जिन्हें रोपा था मैंने

उन बीजों के साथ बोया था धैर्य
और फलप्रसू संकल्प—
मेरा रक्त उन्हें सींच रहा है
और अडिग विश्वास की गर्माहट
पहुँचा रही है ताप
आनेवाले दिन
ज़रूर होंगे गेहूँ के दानों की तरह
चमकीले

भले ही
अतीत से वर्तमान
सब प्रतीक्षित रहा हो
मैंने देखा है ठूँठ को भी एक दिन हरे पत्तों से लदे

मेरी प्रतीक्षा मात्र प्रतीक्षा नहीं है। ●

नियति

□

मेरे स्वप्न !
मैंने साहस और धैर्यपूर्वक
धारण किया है तुम्हें

तुम चैत की धूप की तरह हो
जिससे उम्र पर पड़ा पाला चला जाता है

चाहती हूँ
तुम्हें रूपाकार देना
कि जब तुम खुलो
भविष्य के उजले रूप में
मुझे मेरी सार्थकता मिल जाए

निराश नहीं हूँ मैं
न हूँ मैं संभावनारहित
तुम कोई खुलती और बंद आँखों के तो स्वप्न नहीं
तुम हो मेरा भविष्य
बार-बार धारण करती रहूँगी तुम्हें
आज नहीं तो कल
साकार होगे तुम
पाओगे एक नाम

मेरे स्वप्न
मेरे भविष्य !
एक मिली - जुली नियति है
मेरी और तुम्हारी । ●

अर्थ

□

सेलोटेप के रिंग की तरह
मेरा अर्थ
मेरे भीतर सिमटा पड़ा है

नहीं मिल रहा है मुझे उसका एक कोना
जिसको खींचकर
निकाल सकूं
ताकि मेरा ख़ालीपन पिघल जाए
और मेरी कविता का अर्थ
बादलों की तरह धरती पर बरस जाए। ●

प्रेम

□

चुप्पी की सीमा में
बोलता और बहता
बन्द आँखों में खुलता
आकाश की तरह
साँसों के स्पन्दन में
और प्राणों के कम्पन में
उन्मुक्त और निष्कलुष
शब्दातीत
किन्तु शब्दों में बजता ।●

मौसम

□

एक बार फिर तूफ़ान
आमंत्रण देता है
मुझमें से गुज़रने को

भूली नहीं हूँ
तूफ़ानों के गुज़रने के बाद
बची बर्बादी की त्रासदी
फिर भी प्रस्तुत हूँ
कि या तो भविष्य सार्थक हो उठेगा
या होगा सिर्फ़ एक हादसा

जैसे पत्तों से रहित होता जाता है पेड़
समझ नहीं पाता कारण
कि पत्ते आएँगे या नहीं
वैसे मैं भी नहीं जानती
मौसम के आने से
कब, कौन, कहाँ, कैसे
सार्थक हो जाता है
अपनी पहचान के साथ

नहीं जानती
कि मौसम यदि आएगा भी तो होगा कैसा ? ●

उत्तर की तलाश

□

तुम्हारे हर प्रश्न के उत्तर में
उठते हैं मुझमें भी कई प्रश्न
और तुम्हारी तरह मैं भी
पाना चाहती हूँ उनके जवाब

खोजते हुए
अपने आप को अपने भीतर
टटोलते हुए
मैंने जाना है यही कि
शब्दों में नहीं दिए जा सकते हैं
कई प्रश्नों के उत्तर

और अब तो लगने लगा है मुझे कि
बन गई हूँ मैं स्वयं एक प्रश्न
किसी उत्तर की तलाश में।●

अविश्वास

□

तुमने खुद ही
अविश्वास से करवाई थी मेरी मुलाक़ात

अब कोई सार नहीं है
सच को ज़ाहिर करने की तुम्हारी किसी अदा में
तुम एक खोखले आश्वासन के दलदल में धँसे हो

नए - नए परिचय की
आकृति में
तुम्हें दिखते हैं कुछ स्वप्न और उम्मीदें
और तुम धूनी रमाकर जाप करने लगते हो
एक नई दुनिया को साकार करने की
प्रबल उत्कंठा से

एक संघर्ष जारी है मुझमें
जो पानी की धार की तरह टेढ़ा - मेढ़ा
रिस तो रहा है
लेकिन हरहरा कर दौड़ लगाने में है असमर्थ
अन्यथा बाढ़ के पानी की तरह फैले हुए सम्बंधों से बचाकर
तुम्हें छोड़ आती मैं किसी सुरक्षित जगह पर

हर रोज़ एक बीमार विश्वास को स्वस्थ
देखने की कामना से
मैं देखती हूँ तुमको बार - बार
जानती हूँ कि अब नहीं लौटेगा विश्वास
उसके आने के पहले ही
हमने चढ़ा दी अपने-अपने दरवाज़े की सांकल

जंगली घास की तरह
बढ़ा जा रहा है संशय
जिसमें से होकर गुज़रना
अब होता जा रहा है बहुत मुश्किल । ●

झींगुर की तरह बज रहे हैं शब्द

□

झींगुर की तरह बज रहे हैं शब्द
जला रहे हैं इस निस्तब्ध रात को

रात जल रही है शब्दाघात से
मैं सहला रही हूँ
उसकी देह पर पड़े फ़फ़ोलों को।

शब्द मरहम का काम करते हैं
लेकिन जब वे छोड़े जाते हैं
आग्नेयास्त्र की तरह
वे झुलसा देते हैं
अन्दर - बाहर को

दुख नहीं है मुझे, मेरे बन्धु !
बनी मैं तुम्हारी आहत प्रतिष्ठा का निशाना
पर देखो !
मैंने तुम्हारे शब्दों को प्रभावहीन कर दिया है
अपने सम्पूर्ण मन से तुम्हें क्षमा करते हुए

तुम नहीं जानते,
पारदर्शी अहंकार में लिपटे, मेरे मित्र !
सचमुच तुम नहीं जानते
कि साधारण बात नहीं है
विश्वास की तीखी तलवार पर चलना

मैंने तुम्हें दिया है अपना सहज विश्वास
और तुम हो रहे हो
अपने संशय के शिकार
मै तुमसे कुछ नहीं कहूँगी
नहीं करूँगी तुमसे कोई शिकायत
तुम्हारे शब्दाघात से आहत होकर भी
नहीं भेजूँगी प्रत्युत्तर में कोई आग्नेयास्त्र
करूँगी तुम्हारे लिए प्रार्थना

और जब तुम आओगे मेरे पास
अपने से हारकर
तुम झाँकना मेरी आंखों में
पाओगे वहां तुम वही विश्वास
जो मैंने दिया था तुम्हें पहली बार। ●

ख़ालीपन

□

चेरापूंजी के आकाश में
तैरते कुहासे की तरह
शून्यता घेर लेती मुझे

कामरूप जीवन्तता पर
मानो पसरी होती है
रिक्तता
तैरता रहता है
एक निचाट खालीपन । ●

क्यों कह देते हो ?

□

क्यों कह देते हो तुम
कि अब नहीं आओगे मेरे पास ?

मेरे इर्द गिर्द फैली हुई है धरती
इस इन्तज़ार में
कि तुम उसे उर्वरा बनाओगे
और आने वाले दिनों की
तैयार करोगे फसलें

अब जब कि तुमने कह दिया है
कि नहीं आओगे तुम यहाँ
पलभर में ही खंडहर हो गयी है
एक आलीशान इमारत
जिसमें बसेरा कर लिया है
डरावने अँधेरे ने

जानती हूँ
कि यह वीरान अनबोयी धरती
नहीं बन सकती तुम्हारा घर
क्योंकि तुम्हें सब कुछ
शुरू करना पड़ेगा नये सिरे से

हाँ, अब तुम क्यों आओगे यहाँ
क्योंकि रातोंरात नहीं बन सकता
कोई भवन
जिसमें तुम पनाह ले सको

मैं तो जागती आँखों के स्वप्न की तरह हूँ
मेरे प्रिय,
जिसे रूप देने के लिए
स्वय होम हो जाना पड़ता है।●

अकल्पित

□

मेरी छत से लगा
वर्षों पुराना पीपल का पेड़
अचानक लद गया
नए पत्तों से आज

मेरे उदास मन को
छू गई नए रंग की आभा
मिली नयी स्फूर्ति
पीपल की डालियों ने
कही रहस्य की बात
कि जैसे फूल खिलते हैं ठूँठ में भी
वैसे सच हो जाया करती हैं अकल्पित बातें भी

और मैंने
एक नई सुबह से ख़ुद को धोया
हल्की हो गई मेरी देह ।●

ख़ामोशी

□

मेरी ख़ामोशी का मतलब यह तो नहीं कि
बुझ गए हैं
मेरे भीतर जलते हुए अंगारे

राख दिखने वाली मेरी ख़ामोशी में
क्या तुम नहीं देख पाते छिपी आग को ?
अगर तुम्हें जलने का डर न हो
तो उसे अपने दिल में भरो
वह तुम्हारे ख़ून में बहती हुई
बज उठेगी वीणा की तरह
जिससे रच सकोगे तुम
एक अनोखा राग। ●

अनकही बात

□

मिलते हो तुम
तो करने लगती हूँ महसूस अपना होना
तुम्हारी निकटता का ताप वहा ले जाता है
मुझे,
मेरे शब्दों को निरर्थक बनाता

भरने लगती हूँ अपनी बाँहों में
तुम्हारे साथ बिताये गए पलों को
तुम्हें और तुम्हारे प्रश्नों को आश्वस्त करती

लेकिन मेरे अपने !
जब होती हूँ विदा
हो जाती हूँ भाराक्रान्त
अपने अनकहे शब्दों से

कचोटती है पीड़ा
कि इस बार भी तुमसे नहीं कहा
और जब सुबह आती है
मुझे ,तुम्हारे ताप से
परे हटाने की कोशिश करती
मैं जीने लगती हूँ इस उम्मीद में
कि अब जब मिलूँगी तुमसे
कह दूँगी अपनी अनकही बात

लेकिन एक सिलसिला है
अव्यक्त शब्दों का
जो मुझे तुम तक ले जाता है
और मुझे भी
तुम्हारी तरह उदास कर जाता है । ●

तुम बार-बार आते हो

□

तुम बार-बार आते हो मेरे पास
लेकिन पाओगे क्या, नहीं जानती मैं

आशा और भविष्य का एक रिश्ता है
जो मोड़ देता है स्वप्न को सड़क की तरफ़
और तुम जानते हो
कि आज की सड़कें होती हैं कितनी खतरनाक
स्वप्न बेखटके उन पर दौड़ नहीं लगा सकते । ●

स्वभाव

□

कभी कभी
मेरे हृदय के स्पन्दन में
शब्द-रूप लेते हैं कुछ अक्षर

अक्षर मेरा स्वभाव है
यदि मैं नहीं बोल पाती
तो इसका अर्थ यह तो नहीं
कि मैं चुप हूं

अक्षर अक्षर
मैं तुम से ही बातें कर रही हूं
निःशब्द, निर्वाक । ●

चुनौती

□

चुनौती
धधक रही है मेरी शिराओं में
एक आग दीप्त कर रही है मुझे
संकल्प लिया है मैंने
विपरीत धारा में तैरने का

बन जाना चाहती हूँ मैं अग्नि
जिसमें तपकर
कुन्दन सा
मेरा प्यार निखर सके
विश्वामित्र की तरह
एक नया संसार रच सके। ●

यात्रा

□

मैंने शुरू की है
तुम्हारे देश की यात्रा
और मुझे लगता है
कि अब होगी मेरी शेष-यात्रा

लेकिन तुम्हारे देश की
भूमि पर चलते हुए
मैंने पाया
कि इस पर नहीं बना सकती हूँ
अपना स्थायी आवास
और तुम कहते हो
तुम्हारे विशाल देश में बहुत जगह है
मैं कहीं भी ठहर सकती हूँ

यह तुम्हारा विराट प्रेम है
जो सबको दे सकता है विश्राम और आश्रय
लेकिन मुझे नहीं चाहिए
तुम्हारा आश्रय
न विश्राम

मैं तो चाहती हूँ सिर्फ़ तुम्हारा साथ
और उसके एवज़ देना चाहती हूँ अपना हृदय
ताकि तुम
अपने देश से भी अधिक विशाल बन सको।●

हम दोनों

□

हम दोनों खड़े हैं
दो ध्रुवान्तों पर
परस्पर एक दूसरे को संतुलन देते
एक अवश संसार
की रक्षा करते

दो ध्रुवान्तों की पृथ्वी का
होना उतना ही सच है
जितना सच है हमारा होना। ●

जब तुम नहीं होते

□

जब तुम नहीं होते
तब बांधती हूँ शब्दों में नियाग्रा प्रपात
लेकिन जब तुम होते हो सामने
शब्द मुझ से ही ठिठोली करने लगते हैं

ऐसा क्यों होता है
कि मैं अपने से ही छूट जाती हूँ
हालांकि तुम होते हो सम्पूर्ण
और मैं भी अधूरी नहीं होती। ●

दाँव पर प्रतिष्ठा

□

दाँव पर लगी तुम्हारी प्रतिष्ठा
देती है मुझे प्रोत्साहन
कि बन जाऊँ मैं तुम्हारी सम्पूरक
अनन्त यात्रा में

हो चुकी हूँ प्रस्तुत
एक निष्ठा रच-बस गई है मुझमें

मेरे अपने !
मुझमें है सावित्री संकल्प
गढ़ सकती हूँ नए प्रतिमान, नए मूल्य
तुम्हारी प्रतिष्ठा
अब मेरी प्रतिष्ठा है ।●

स्पर्श

□

मैं दौड़ रही हूँ निरन्तर
ज़मीन के एक टुकड़े की तलाश में
जहाँ भर सकूँ अपने में तुमको

तुम्हारी तेज़ रोशनी में
मैं सिमटती चली जाती हूँ
छूटती जाती हूँ अपने बन्धनों से

तुम्हारे शब्दों के सम्मोहन में बँधी
जब भी छूती हूँ तुमको
जागने लगती हैं मेरे भीतर अनन्त सम्भावनाएँ। ●

चाँदनी और धूप

□

चाँदनी
मेरे माथे पर
नासिका पर
ग्रीवा पर
ठोढ़ी पर
वक्षस्थल पर

चाँदनी
कितनी गदरा गयी है
मुझे छूकर
गहरा गयी है

सुबह की धूप
मेरे माथे पर
नासिका पर
ग्रीवा पर
चिबुक पर
वक्षस्थल पर

धूप
कितनी उजली हो गयी है
मुझे छूकर
सुनहली हो गयी है। ●

तुमने क्यों कहा था

□

एक सुबह
तुमने कहा था—
मैं तुम्हारा हिस्सा हूँ

तुम्हारे जाने के बाद ही
दुनिया मेरे लिए एक आश्चर्य हो गई
और रात भर में
प्यार जन्म लेकर
पूर्ण यौवन के साथ
उतर गया मेरी शिराओं में

मैं सच कहती हूँ
अब तुम्हें किसी और के साथ
जीने का हक़ भी नहीं

अब यदि तुम कभी भूल से
किसी की गोद में दुबक जाओगे
तो वह गोद मेरी हो जाएगी
जब कोई हथेली तुम्हारे बालों को सहलाएगी
तब वहाँ नज़र आयेंगे तुम्हें मेरे ही हाथ
आग से तप्त, तुमसे खेलने को व्यग्र

जब तुम्हारे तृषार्त्त अधर सूखकर
प्यास-प्यास कहकर फड़फड़ाएँगे
तब मेरी अँजुरी से टपकते
जल-कणों से ही तुम जीवन पाओगे

यदि तुमने मुझे छोड़ने की कोशिश की
तो इस विस्तृत दुनिया में
तुम जहाँ भी जाओगे
तुम्हें रिक्तता ही कचोटेगी
बंद कमरे में
जब तुम्हारी साँस घुटने लगेगी
और तुम खुली हवा में साँस लेने बाहर आओगे
तब रंग में, रूप में, गंध में, स्पर्श में
हर ओर
दूर - दूर तक
केवल मुझे ही पाओगे

तुम जिस रास्ते से भी गुज़रोगे
मैं सड़क बनकर बिछ जाऊँगी
और वह सड़क आड़ी-तिरछी, लम्बी-चौड़ी
सड़कों की भूल-भुलैया में
चक्कर लगाकर
वापस मेरे दरवाज़े पर तुम्हें छोड़ जायेगी

हाँ, तुम मेरे भीतर से होकर ही
मुझ तक आओगे

तुमने ही तो कहा था
कि मैं तुम्हारा हिस्सा हूँ
और जब तुम महसूस करोगे
कि तुम भी मेरे हिस्से हो
तब मैं नीरव रात की तरह
सुनसान नहीं होऊँगी
होऊँगी मैं उजली सुबह से भी अधिक उजली। ●

अर्द्धनारीश्वर

□

तुमने कहा
मैं तुम्हारा आधा हिस्सा हूँ
जिसकी खोज में भटकते रहे हो तुम
शहर दर शहर

तुमने कहा
मैं तुम्हारी वह चाबी हूँ
जिससे टूट सकेगा कोई तिलिस्म
और यह शहर राहत की साँस लेगा

मेरे आधे हिस्से !
मैं कुंजी की तरह हूँ तुम्हारे हाथों में
अब तोड़ दो वह तिलिस्म
जिससे हो सकता है इस शहर का भला

तुममें भरा है उत्साह
और मुझमें है तुम्हारे लिए अनन्त प्यास
अगर इससे
कोई तिलिस्म टूटे तो टूटे
अगर इस शहर का भला हो तो हो

मेरे लिए न तो अतीत है
न भयभीत करता भविष्य
सिर्फ़ है एक निरन्तर वर्तमान

चलो, हम
एक दूसरे के भीतर
गुमशुदा स्वप्न की तलाश करें। ●

तुम बनो

□

तुम बनो धरती
मैं छाई रहूँगी तुमपर
आकाश की तरह

तुम बनो साक्षात दर्शन
मैं बोल उठूँगी
सशरीर प्रार्थना की तरह। ●

विश्वास तो स्वयं रचना है

□

विश्वास की सीढ़ी चढ़ रही हूँ मैं
साकार देखने के लिए उसे
जिसे देखा है मैंने तुम्हारी आँखों में

भर ली है मैंने अपने हृदय में
तुम्हारे होठों की अनन्त प्यास
जो मेरे रक्त में घुलकर
बन रही है मेरी प्यास

तुम्हारा स्वप्न बनता जा रहा है मेरा स्वप्न
तुम्हारी नींद, मेरी नींद
तुम्हारा जागरण, मेरा जागरण

और तुम कहते हो कि दूँ मैं तुम्हें अपना विश्वास ?

विश्वास तो स्वयं रचना है
वही तो रच रहा है मुझे। ●

प्रतिध्वनि

कलकत्ता महानगर के कुछ
रचनाकारों द्वारा
प्रतिध्वनि का गठन

□

नये रचनाकारों को मंच
देने के लिए संकल्पशील।

□

प्रतिध्वनि का यह सहयोगी प्रयास।

□

प्रथम प्रस्तुति में तीन प्रकाशन

इकेबाना : सविता बैनर्जी
हथेली पर खंडित सूर्य **: आशा अंशु**
विश्वास रच रहा है मुझे **: इन्दु जोशी**